

समीक्षात्मक सोच क्यों?

चित्ररेखा*

जिस प्रकार आवश्यकता, आविष्कार की जननी होती है, ठीक उसी प्रकार किसी भी परिवर्तन की जननी, व्यक्ति की स्वयं की सोच होती है। सोच में बदलाव परिवर्तन के लिए ज़रूरी है और सोच में परिवर्तन लाने के लिए प्रयास व परिस्थितियों में परिवर्तन आवश्यक है। एक व्यक्ति की सोच ही होती है जो उसके विचारों को जन्म देती है, उसका भविष्य तय करती है और उसे सही दिशा दिखाने का काम करती है। सोच क्या होती है? यह कैसे बनती है और कैसे बदली जा सकती है? एक व्यक्ति की सोच का उसके जीवन में क्या महत्व होता है? समीक्षात्मक सोच क्या है? और यह किस प्रकार नए ज्ञान के सृजन और सार्थक जीवन जीने में सहायक होती है? अपने विद्यार्थियों और समाज की समीक्षात्मक सोच बनाने में एक शिक्षक की क्या भूमिका हो सकती है? यह लेख इन्हीं सब प्रश्नों के संभावित उत्तरों पर प्रकाश डालने का प्रयास करता है।

सोच का अर्थ है—चिंतन, मंथन व मनन करना। सोच व विचार में अंतर होता है। सोच एक मानसिक प्रक्रिया है, जो मस्तिष्क के अंदर तक सीमित है, परंतु विचार उसकी अभिव्यक्ति है अर्थात् व्यक्ति के विचारों की अभिव्यक्ति से ही यह पता चलता है कि वह कैसी सोच रखता है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि विचारों के निर्माण के लिए सोच का होना ज़रूरी है। यद्यपि विचारों की अभिव्यक्ति मौखिक, लिखित, भावात्मक व चित्रात्मक आदि रूपों में हो सकती है।

हमारी सोच कभी स्थायी नहीं होती। सोच में प्रयत्नों से, परिस्थितियों व समय के अनुसार परिवर्तन करना संभव है। सोचने की प्रक्रिया जीवन भर चलने वाली प्रक्रिया होती है अर्थात् जब तक मनुष्य है तब तक सोचने की प्रक्रिया भी है। जब तक वह जीवित है, तब तक उसे अनेक प्रकार के कार्यों को करना

पड़ता है और बिना सोचे वह इन कार्यों को पूरा नहीं कर सकता।

सफल एवं सार्थक जीवन में सोच की भूमिका
सोच का हमारे जीवन में अत्यंत महत्व है। यह कुदरत का इनसान को दिया गया सबसे अच्छा उपहार है। परंतु यह इनसान के हाथों में है कि वह अपनी सोच का इस्तेमाल कैसे करता है? हमारी सोच ही है जो हमें मुश्किलों से लड़ने का हौसला देती है और हमारे हौसलों को नई उड़ान भी देती है। उदाहरण के लिए, यदि हम 'ज्योतिर्गमय फ़ाउंडेशन' की संस्थापक व राष्ट्रीय सम्मान से सम्मानित टिफनी बरार के जीवन परिचय को देखें तो पाएँगे कि वे अपनी बाल्यावस्था से ही अपनी आँखों से देख नहीं सकती थीं। समाज का उनके प्रति नकारात्मक रवैये से भी उन्होंने हार

नहीं मानी और अपनी दूरगामी सोच व हौसलों से न केवल अपने स्वयं के जीवन को सँवारा है, बल्कि केरल (तिरुवनंतपुरम) में वर्ष 2012 में मोबाईल ब्लाइंड स्कूल और वर्ष 2015 में ज्योतिर्गमय फ़ाउंडेशन की स्थापना कर अन्य दृष्टिबाधित लोगों के जीवन को सँवारकर समाज के समक्ष अपनी सोच व हौसले का एक जीवंत उदाहरण प्रस्तुत किया है।

हमारी सोच ही है जो हमारे अंदर नई ऊर्जा का संचार कर सकती है। हमारी सोच ही हमें मंज़िल तक पहुँचने में, कार्य-दिशा व कार्य-नीति बनाने में सहायक होती है। हमारे जीवन को नई दिशा देती है। हमारे आत्मविश्वास को बढ़ाकर हमारी मानसिकता और व्यक्तित्व का निर्माण करती है और हमें सफल व सार्थक जीवन जीने में सहायता करती है। उदाहरण के लिए, यदि हम 106 वर्षीय, पद्म श्री सम्मान से सम्मानित कर्नाटक के शालूमारदा थिम्माक्का (पर्यावरणविद्), के जीवन की घटनाओं को जानें तो पाएँगे कि वे 40 वर्ष की उम्र में संतान न होने के कारण आत्महत्या करना चाहती थीं। परंतु उन्होंने सोचा कि आत्महत्या समस्या का कोई समाधान नहीं है। उन्होंने पेड़ उगाने व लगाने का सोचा और पेड़ों को अपने बेटे की तरह माना तथा उन्हें सींचा। उन्होंने अपने अब तक के जीवन काल में लगभग 385 बाँस सहित 8000 पेड़ लगाए हैं। उन्होंने अपनी सोच से यह साबित कर दिया कि यदि हम अपनी सोच का सही समय पर सही

प्रकार से उपयोग करें, तो न केवल हम अपने जीवन को सफल बना सकते हैं, अपितु अपने समाज से भी रूढ़िवादी व निराशावादी सोच को खत्म कर सकते हैं।

हमारी सोच, हमारी निर्णय शक्ति, तर्कशक्ति, समस्या-समाधान, स्वयं के दृष्टिकोण का निर्माण, सृजनात्मकता व कार्य शैली आदि को विकसित करने में सहायक होती है। विभिन्न व्यक्तियों में विभिन्न प्रकार की सोच पाई जा सकती है, जैसे— रूढ़िवादी, नकारात्मक, सकारात्मक, आलोचनात्मक आदि। अब एक प्रश्न यह है कि हमारी सोच ऐसी अर्थात् रूढ़िवादी, नकारात्मक, सकारात्मक या आलोचनात्मक आदि कैसे बनती है?

सोचने की प्रक्रिया हमारे अंदर जन्म से ही पाई जाती है और हर किसी की सोचने की प्रक्रिया व्यक्तिगत होती है। परंतु फिर भी ऐसे बहुत-से कारक हैं, जो हमारी सोच को विभिन्न प्रकार की बनाने व उसे प्रभावित करने की क्षमता रखते हैं, जैसे—

- माता-पिता व परिवार के अन्य सदस्य;
- शिक्षक तथा महान व्यक्तियों का व्यक्तित्व;
- समाज व प्रचलित धारणाएँ;
- शिक्षा प्रणाली;
- किताबें व साहित्य, अखबार, पत्र-पत्रिकाएँ;
- परिस्थितियाँ व घटनाएँ;
- तकनीकी परिवर्तन; तथा
- सोशल मीडिया व प्रिंट मीडिया आदि।

सोच	उदाहरण
• रूढ़िवादी सोच लकीर का फ़कीर होना, तथ्यों को यथास्थिति में स्वीकार करना, बदलाव से डरना व उसे स्वीकार न करना, अंधविश्वास को बढ़ावा देना, भाग्य पर अधिक विश्वास करना, दूसरों की सोच पर निर्भर रहना और उसका अनुसरण करना। परिणाम—अंधविश्वास को बढ़ावा, समाज के विकास में बाधक	रूढ़िवादी सोच वाले लोगों द्वारा लड़कियों व लड़कों में भेद करना और लड़कियों को पराया धन मानकर पढ़ने के लिए न भेजना। उन्हें घर के कामों में ही लगाए रखना।

• नकारात्मक (निराशावादी) सोच कुछ नया न सोचना, उदासीन रहना, हार मान लेना, जैसे— अब कुछ नहीं हो सकता, करने से कोई फ़ायदा नहीं, सब असंभव है, कुछ नहीं बदलेगा, प्रयास करना व्यर्थ है नकारात्मक सोच अपने प्रति भी हो सकती है और अन्य लोगों के प्रति भी हो सकती है। परिणाम — आत्मविश्वास व समाज विकास में बाधक	एक बार कार्य में सफलता न मिलने पर कार्य को करना ही बंद कर देना। उदाहरण के लिए, परीक्षा में पास न होने पर परीक्षा ही न देना और पढ़ाई करना ही छोड़ देना, नकारात्मक सोच को दर्शाता है।
• सकारात्मक (आशावादी) सोच हार न मानना, मुश्किलों में भी संभावनाएँ तलाशना, अँधेरे में प्रकाश निकलने की आशा रखना, उम्मीद ऊँची रखना, स्वयं पर भरोसा रखना। परिणाम — आत्मविश्वास व समाज के विकास में सहायक	किसान की फ़सल वर्षा अत्यधिक होने या न होने के कारण खराब हो जाती है। परंतु वह फिर भी अगली फ़सल अपनी सकारात्मक व आशावादी सोच के साथ बोता व उगाता है।
• प्रगतिशील व दूरगामी सोच कुछ नई सोच रखना, हमेशा आगे की तरफ़ सोचना, प्रयोगों को प्राथमिकता देना, कल्पनाओं को सत्यापित करने पर बल देना, नकारात्मक प्रभावों की अवहलेना करना और उस दिशा में सोचना जो की विकास में सहायक हो। परिणाम — स्वयं, समाज व राष्ट्र विकास में सहायक	अध्ययन करने वाले विद्यार्थी हमेशा प्रगतिशील सोच के साथ अपने लक्ष्य को प्राप्त करने का प्रयास करते हैं और इन्हीं प्रयासों में वे भावी जीवन हेतु आवश्यक धन तथा सुखी जीवनयापन हेतु उचित रोज़गार प्राप्त कर या चयन कर राष्ट्र के निर्माण में अपना योगदान देते हैं।
• आलोचनात्मक / समीक्षात्मक सोच स्वविवेक के उपयोग पर बल, तथ्यों को गंभीरता से सोच कर उनका विश्लेषण करना व उनकी जाँच कर अपनी सोच का निर्माण करना अर्थात् क्या सोचना है? सोचते समय किन-किन तथ्यों का ध्यान रखना है? किस दिशा में सोचना है? परिणाम के लिए तैयार रहना इत्यादि। परिणाम — वैज्ञानिक दृष्टिकोण को बढ़ावा, रूढ़िवादी व निराशावादी सोच से मुक्ति, अंधविश्वासों से मुक्ति, स्वयं सत्य की खोज करने को प्रोत्साहित होना व नए सत्य का निर्माण करना। स्वयं के विकास व समाज एवं राष्ट्र के विकास में सहायक।	विभिन्न रूढ़िवादी परंपराओं, जैसे— लड़कों व लड़कियों में भेद करना, विभिन्न अंधविश्वासों (बिल्ली का रास्ता काटना, छींक आने पर कार्य शुरू न करना, रात को झाड़ू न लगाना आदि) को ज्यों का त्यों न मानकर, उनके औचित्य को जानने का प्रयास करना व तथ्यों का समीक्षात्मक विश्लेषण कर स्वविवेक का निर्माण करना। उदाहरण के लिए, यदि कोई व्यक्ति किसी परीक्षा या कार्य में सफल नहीं हो पाता तो वह अपने भाग्य को न कोसकर तथा कार्य को बीच में ही न छोड़कर अपनी पूरी कार्य शैली का गहराई से अध्ययन कर, यह जानने का प्रयास करता है कि उसे अपेक्षित परिणाम किस कारण प्राप्त नहीं हुआ। कारणों का सही हल ढूँढ़ने के लिए वह लगातार प्रयासरत रहता है। इसलिए वह न केवल प्रगतिशील सोच का परिचय देता है, अपितु समीक्षात्मक सोच का भी अनुसरण करता है।

हमारे दैनिक जीवन में ऐसे और भी अनेक उदाहरण हैं जहाँ हम अपनी सोच का सही इस्तेमाल नहीं करते, जैसे — यह मान लेना कि रात को पेड़ सो जाते हैं, इसलिए उन्हें हिलाना नहीं चाहिए। जबकि वास्तविकता में यदि हम सोचें तो पाएँगे कि इसका प्रमुख कारण यह है कि पेड़-पौधों पर अनेक प्रकार के पक्षी व जीव रहते हैं जो रात में उन पर विश्राम करते हैं और जब पेड़-पौधों को हिलाया जाएगा तो वे सब पक्षी व जीव परेशान हो जाएँगे तथा उनके घोंसले भी टूट सकते हैं।

नकारात्मक व रूढ़िवादी सोच हमारे समाज के लिए घातक है। इसलिए यह आवश्यक है कि बच्चों व समाज में समीक्षात्मक/आलोचनात्मक सोच को बढ़ाया जाए। क्योंकि समीक्षात्मक सोच, प्रगतिशील व सकारात्मक, दोनों सोच के गुणों को अपने में समाहित किए हुए है।

समीक्षात्मक एवं आलोचनात्मक सोच

सामान्यतः हम आलोचना व आलोचनात्मक चिंतन को एक ही अर्थ में लेते हैं। आलोचना व आलोचनात्मक चिंतन में अंतर होता है। आलोचना का मतलब है — किसी व्यक्ति, विचार, संस्था आदि पर टीका-टिप्पणी करना। जबकि आलोचनात्मक चिंतन, सकारात्मक व प्रगतिशील चिंतन की नींव है। आलोचनात्मक सोच का अर्थ है, समीक्षात्मक सोच अर्थात् तथ्यों को बारीकी से समझ कर उनकी वास्तविकता को जानना। किसी तथ्य को उसी प्रकार से ही न स्वीकार करना जैसा कि वह हमारे समक्ष प्रस्तुत किया गया है अर्थात् उसके प्रति वही सोच व विचार न बनाना जो कोई अन्य व्यक्ति हमसे बनवाना चाहता है। इस प्रकार, किसी बात पर यथावत अमल

न करना, बल्कि स्वयं विवेक का प्रयोग करते हुए तथ्य की गंभीरता पर सूक्ष्मता से विचार कर, उसके कारण व परिणाम पर विचार करते हुए अपना स्वयं का एक दृष्टिकोण बनाना। जो कि वास्तविकता के न केवल बहुत निकट हो, अपितु अज्ञानता, अंधविश्वास व पक्षपात से दूर हो।

आलोचनात्मक एवं समीक्षात्मक चिंतन की विशेषताएँ

- सच्चाई व वास्तविकता से रूबरू होने व उसको जानने का एक रास्ता है।
- सोच को धरातल पर कार्य रूपी एक आकार देती है।
- समस्या से निकालकर समस्या समाधान की ओर ले जाती है।
- क्या, कैसे और क्यों से लेकर क्या होना चाहिए, जैसे मुख्य बिंदुओं पर कार्य करती है।
- सुनी-सुनाई बातों पर आँख बंद करके विश्वास करने और उसे यथावत स्वीकार करने से रोकती है।
- वैज्ञानिक पद्धति पर बल देते हुए, तथ्यों की जाँच करने को प्रेरित करती है तथा नए नियम बनाने और उनमें कारण व परिणाम को जानकर उनके मध्य संबंध जानने का प्रयास कराती है।
- रूढ़िवादिता, मिथ्या धारणाओं व अंधविश्वासों पर रोक लगाती है तथा जीवन को सार्थक ढंग से जीना सिखाती है। स्वस्थ आदतों के निर्माण में सहायक होती है।
- स्वयं का एक निष्पक्ष, सकारात्मक दृष्टिकोण बनाने और उसका उपयोग करने के लिए प्रोत्साहित करने के साथ-साथ आत्मविश्वास जाग्रत कर व्यावहारिक कुशलता व व्यक्तित्व निर्माण करने और उसे बनाए रखने में सहायक होती है।

- स्वयं के विवेक से कार्य करने पर बल देती है तथा दूसरों के तथ्यों या विचारों पर तर्क देने और अन्य लोगों के विचारों को सुनने व समझने को तैयार करती है।
- रटंत प्रक्रिया को समाप्त कर दिमाग को क्रियाशील बनाती है व कार्य के प्रति समझ विकसित करती है तथा तथ्यों को समझने पर बल देती है।
- विश्लेषणात्मक व गहन चिंतन को बढ़ाती है अर्थात् एक ही तथ्य को अलग-अलग परिप्रेक्ष्य में सोचने का मौका देती है। खोज करने को प्रोत्साहित करती है।
- साहित्य, कहावतें, दोहे, विषय-वस्तु आदि केवल शब्दों व किताबों तक ही सीमित होकर रह गए हैं। कहावतों व दोहों का अर्थ न तो स्पष्ट रूप से बताए जाते हैं और न ही उनके पीछे की कहानियों व मूल्यों के औचित्य को सही प्रकार से बताया जाता है। यदि बताया भी जाता है तो उनका व्यावहारिक रूप से प्रयोग नहीं किया जाता है।
- पाठ्यपुस्तक की विषय सामग्री का सीमित मात्रा में केवल अंक प्राप्ति के लिए ही प्रयोग होना अर्थात् सीखने के लिए नहीं पढ़ना, बल्कि केवल अंक प्राप्ति के लिए पढ़ना व पढ़ाना। सीखने व व्यावहारिक समझ पैदा करने की अपेक्षा रटने की प्रवृत्ति को बढ़ावा मिलना। परीक्षा प्रणाली के द्वारा भी विद्यार्थियों को कुछ नया सोचने व करने से रोकना अर्थात् सीमित और मनचाहा उत्तर मिलने पर ही उन्हें अंक दिए जाना। गुणवत्ता के स्थान पर अंकों को अधिक महत्व देना।

समीक्षात्मक सोच की आवश्यकता

प्रायः हमारे समाज में समीक्षात्मक व प्रगतिशील सोच कम होती जा रही है। लोग तथ्यों को गंभीरता से नहीं लेते तथा दूसरे के बताए गए मार्ग पर बिना सोचे-समझे चलते रहते हैं। इसके पीछे कौन-से कारण हो सकते हैं? उन्हें ज्ञात करने के लिए निम्न जानकारी दी गई है —

- अधिकांश माता-पिता तथा शिक्षक जोखिम उठाने से डरते हैं। वे कार्य-परिणाम को सोचे बिना ही अपनी सोच को प्यार से या फिर तानाशाही रूप से अपने बच्चों पर लागू करते हैं। वे अपने बच्चों से अपना मनचाहा परिणाम प्राप्त करने के उद्देश्य से उन्हें कुछ नया करने व उन्हें स्वयं की सोच व समझ का उपयोग करने से रोकते हैं और यह सोचते हैं कि उनके बच्चे हमेशा उनके दिखाए मार्ग पर ही चलते रहें। वे उन्हें उनकी समस्याओं को स्वयं हल करने का मौका नहीं देते। बल्कि स्वयं उनकी समस्याओं को हल करके, उनकी सोच के द्वार को स्वयं ही बंद कर देते हैं।
- पढ़ते व पढ़ाते समय, प्रयोगात्मक विधियों का प्रयोग कम-से-कम किया जाना व समस्या पर गंभीरता से न तो स्वयं विचार करना और न ही विद्यार्थियों से करवाना। केवल पाठ्यक्रम की समाप्ति तथा किताबी ज्ञान पर अधिक बल देना तथा अन्य मानसिक क्रियाओं की अनदेखी करना। ऐसी परिस्थितियाँ, चुनौतियाँ एवं मौके कम-से-कम प्रस्तुत करना, जिनसे विद्यार्थियों की जिज्ञासा कुछ करने व सोचने को प्रेरणा बहुत कम मिले।
- मीडिया, समाचार पत्रों, पत्रिकाओं आदि द्वारा समाज की वास्तविक तस्वीर न दिखाना, बल्कि बनावटी दृश्य विद्यार्थियों के समक्ष प्रस्तुत कर और उनको भ्रमित कर, उनकी सोच को एक ही दिशा में ले जाना।

- मोबाइल व इंटरनेट, सोशल मीडिया, बनी-बनाई डी.वी.डी, सी. डी. आदि का बच्चों पर इस प्रकार से हावी होना कि वे अपनी हर समस्या का हल ढूँढ़ने के लिए इंटरनेट पर आश्रित होते जा रहे हैं।
- बच्चे देखकर व अनुकरण के माध्यम से सीखते हैं। अतः समाज में तथा शिक्षकों के स्वयं के आचरण व व्यवहारों में समीक्षात्मक सोच का अभाव होने से उन्हें अनुकरण के माध्यम से सीखने के अवसर कम मिलते हैं।
- बच्चों को दैनिक जीवन में समीक्षात्मक सोच को उचित रूप में प्रयोग करने का अवसर व प्रोत्साहन न देना।

शिक्षकों के द्वारा आलोचनात्मक/समीक्षात्मक सोच को अपने विद्यार्थियों में कैसे बढ़ाया जा सकता है, इसके कुछ सुझाव निम्न प्रकार हैं —

1. **स्वयं एक अच्छा उदाहरण बनना** — सबसे पहले शिक्षकों को बच्चों के समक्ष स्वयं को एक अच्छा उदाहरण बनना होगा और इसके लिए उन्हें कई बातों को अपनाना होगा, जैसे—पूछे गए प्रश्नों व घटनाओं पर तुरंत प्रतिक्रिया न देकर सुनने, समझने व परिणाम पर ध्यान देते हुए उन पर अपनी प्रतिक्रिया देनी होगी। दूसरा, समस्या के बारे में ही न सोचना, बल्कि समस्या का हल भी सोचना होगा ताकि बच्चे उनके व्यवहार का निरीक्षण कर तथ्यों को गंभीरता से लें और समीक्षात्मक सोच के महत्व को समझें। वहीं दूसरी तरफ़ शिक्षक को विद्यार्थियों के माता-पिता तथा समाज के अन्य लोगों को भी समीक्षात्मक सोच के महत्व से परिचित कराना होगा।
2. **समाज के महान व्यक्तियों की सोच व उनके कार्यों से अवगत कराकर विद्यार्थियों को प्रेरित करना** — उदाहरण के लिए, महात्मा

गांधी, स्वामी विवेकानंद, भीमराव अंबेडकर, सावित्रीबाई फूले, पूर्व राष्ट्रपति ए.पी.जे. अब्दुल कलाम आदि समाज के महान व्यक्तियों के जीवन, उनकी सोच व उनके कार्यों के बारे में विद्यार्थियों को जानकारी देना। वर्तमान में समाज सुधारकों, जैसे— टिफनी बरार, शालूमरदा थिम्माक्का, कैलाश सत्यार्थी आदि लोगों की सकारात्मक तथा दूरगामी सोच तथा उनके कार्यों से विद्यार्थियों को अवगत कराना और बताना कि वे किस प्रकार अपनी सोच से समाज के लिए एक बड़ी मिसाल बन गए।

3. **वातावरण तैयार करना** — अप्रत्यक्ष रूप से शिक्षक को एक ऐसा वातावरण तैयार करना होगा जिसमें प्रत्येक बच्चे को न केवल यह मौका दिया जाए कि वे किसी तथ्य के प्रति अपनी सोच को प्रकट करें, बल्कि अपनी सोच पर विचार भी करें कि क्या उसने सही सोचा है? यदि नहीं तो उसका हल क्या है? वह गहराई से इसका विश्लेषण भी करें।
4. **समन्वयन** — आलोचनात्मक सोच बढ़ाने के लिए शिक्षकों को यह देखना होगा कि क्या आलोचनात्मकता से जुड़ी विषय-वस्तु की सोच को अन्य विषयों के साथ अप्रत्यक्ष रूप से समन्वित किया गया है, यदि नहीं किया गया है, तो इसे अन्य विषयों के साथ समन्वित करना होगा और यदि किया जा चुका है, तो यह देखना होगा कि क्या इसे सही प्रकार से क्रियान्वित किया जा रहा है? यदि नहीं, तो इस दिशा में कदम उठाने होंगे, जिससे कि यह शिक्षक व विद्यार्थियों के व्यवहार का हिस्सा बन पाए। विषय-वस्तु या पाठ्यक्रम को पढ़ाते समय अप्रत्यक्ष रूप से आलोचनात्मक चिंतन को उचित स्थान दिए जाने से बच्चे, बिना किसी

मनोवैज्ञानिक बोझ के खुशी-खुशी इसका प्रयोग अपने जीवन में व्यावहारिक रूप से कर पाएँगे। परीक्षा में अंक प्राप्ति के साथ गुणवत्ता को महत्व दिया जाना चाहिए।

5. बाल्यावस्था से ही समीक्षात्मक सोच का प्रयोग करवाना — शिक्षक को प्रारंभ से ही अर्थात् बाल्यावस्था से ही आलोचनात्मक सोच को विद्यार्थियों में विकसित करना होगा। क्योंकि किशोरावस्था या प्रौढ़ अवस्था में व्यक्ति की अपनी सोच बन चुकी होती है और उसमें बदलाव करना अपने आप में एक बड़ी चुनौती होता है।

6. स्वतंत्र अभिव्यक्ति का मौका — समीक्षात्मक सोच को बढ़ावा देने के लिए शिक्षक को अपने सभी विद्यार्थियों को स्वतंत्र अभिव्यक्ति का मौका देना होगा। यह अभिव्यक्ति का मौका लिखित, मौखिक, चित्रात्मक व भावात्मक आदि रूपों में दिया जा सकता है। साथ-साथ खेलों में शतरंज, प्रश्नोत्तरी जैसे अन्य मानसिक खेलों को बढ़ावा दिया जाना चाहिए तथा समस्या समाधान तथा खोज विधि का अधिक-से-अधिक प्रयोग किया जाना चाहिए।

7. कठिन परिस्थितियाँ व समस्याएँ देना — विद्यार्थियों को समय-समय पर विभिन्न कठिन परिस्थितियों व समस्याओं को जानबूझकर देना। ताकि वे न केवल उन परिस्थितियों व समस्याओं का सामना कर सकें, बल्कि उन परिस्थितियों व समस्याओं से प्राप्त परिणामों से अपने विचारों का निर्माण कर सकें। उदाहरण के लिए —

(i) **समस्या** — क्या सोचने के लिए भी सोचने की ज़रूरत होती है? क्यों?

(ii) **समस्या** — क्या कारण है कि वस्तु को लगातार उपभोग करने से उससे मिलने वाली उपयोगिता व संतुष्टि कम होती चली जाती है। जबकि आदर और सम्मान जितना मिलता है, उसकी उपयोगिता कम नहीं होती?

(iii) **समस्या** — किसी चुनौती का सामना करने के दो उपाय हैं — उसे स्वीकार या अस्वीकार करें। इसका क्या अर्थ है? और आपके मत में कौन-सा उपाय सही है और क्यों?

8. समाचार-पत्रों के द्वारा — कक्षा में विद्यार्थियों को समाचार-पत्रों में दिए गए लेखों एवं विश्लेषणात्मक टिप्पणियों पर चर्चा कराकर भी समीक्षात्मक सोच को बढ़ाया जा सकता है।

9. पहेलियाँ हल करवाना — कक्षा में विद्यार्थियों से पहेलियाँ हल करवाना व उनके गूढ़ अर्थ को समझकर उसका उपयोग करने के लिए प्रेरित करना, जैसे — वह कौन-सा धन है जो खर्च करने पर बढ़ता चला जाता है और खर्च न करने पर कम होता चला जाता है? और क्यों?

10. पाठ्यपुस्तक में दी गई विषय-वस्तु का प्रयोग करना व प्रश्न पूछना — पाठ्यपुस्तक में दी गई कहानियों व लोक कथाओं का प्रयोग कर आलोचनात्मक चिंतन के लिए विद्यार्थियों को प्रोत्साहित करना व उनसे प्रश्न पूछना। आइए, कुछ उदाहरणों के माध्यम से इसे समझने का प्रयास करते हैं।

उदाहरण 1 — हिंदी पाठ्यपुस्तक *रिमझिम* कक्षा 5 के प्रथम पाठ का नाम है 'राख की रस्सी' जो कि एक लोक कथा है। इस लोक कथा में लोनपो गार तिब्बत का एक मंत्री है, जो अपने बेटे को कुशाग्र बनाना चाहता है। वह

उसके समक्ष चुनौती रखता है कि वह सौ भेड़ों को लेकर शहर जाए और उन्हें मारे और बेचे बिना, सौ जौ के बोरों के साथ घर वापस आए अन्यथा लोनपो उसे घर में घुसने नहीं देगा।

प्रश्न — अगर आप उसकी जगह होते तब आप उस चुनौती का सामना कैसे करते?

कथा — शहर में उसे एक लड़की मिलती है और उसकी समस्या का कारण पूछ उससे कहती है कि इसमें निराश होने कि कोई बात नहीं है और वह भेड़ों के बालों को उतारती है और उन्हें बाज़ार में बेचकर उसकी समस्या को हल कर देती है और उसे सौ भेड़ों व सौ जौ के बोरों के साथ घर वापस भेज देती है। जब लोनपो को पता चलता है कि उसका बेटा स्वयं इस बारे में न सोच सका तब उसे बहुत दुख होता है, परंतु फिर भी वह पुनः एक बार अपने बेटे को वही चुनौती देता है और उसे सौ भेड़ों व सौ जौ के बोरों के साथ घर वापस लौटने को कहता है।

प्रश्न — अब की बार इस चुनौती का क्या हल हो सकता है?

कथा — इस बार वह लड़की, भेड़ों के सींगों को काट लेती है और उन्हें बाज़ार में बेचकर उनसे प्राप्त पैसों से, सौ जौ के बोरों और भेड़ों के साथ उसे घर वापस भेज देती है।

प्रश्न — क्या वह हल सही था? यदि हाँ तो कैसे?

प्रश्न — क्या आपके पास इस समस्या का कोई अन्य हल है?

प्रश्न — लोनपो को किस बात से दुःख होता है और क्यों? क्या उसका दुःखी होना सही था?

कथा — जब लोनपो को सच्चाई का पता चलता है तो वह अपने बेटे से कहता है कि वह

उस लड़की से कहे कि, “वह नौ हाथ लम्बी एक राख की रस्सी बनाकर दे।” उसका बेटा जब उस लड़की को यह बताता है तो वह कहती है कि ठीक है वह रस्सी तो बनाकर दे देगी पर एक शर्त पर कि, “वह रस्सी उसके पिता को गले में पहननी होगी”।

प्रश्न — क्या राख की रस्सी बनाई जा सकती है? यदि हाँ तो कैसे?

प्रश्न — रस्सी तो जल गई पर उसके बल नहीं गए का क्या मतलब?

प्रश्न — इस कथा में लोनपो, उसके बेटे व उस लड़की की सोच कैसी है? हमें अपनी सोच कैसी बनानी होगी और क्यों?

उदाहरण 2 — पाठ्यपुस्तक *रिमझिम* के पाठ 5 का नाम है, ‘जहाँ चाह वहाँ राह’। यह कहानी एक लड़की इला सचानी की है जिसके हाथ काम नहीं करते, परंतु फिर भी वह हार नहीं मानती। अपने हाथों को अपने लिए एक चुनौती मानकर चलती है और सोचती है कि वह हाथों द्वारा किए जाने वाले काम को किस प्रकार कर सकती है? और फिर वह सोचती है कि वह यह काम अपने पैरों के द्वारा कर सकती है परंतु कैसे? इसका हल भी वह स्वयं ही सोचती है तथा अपनी सोच को धरातल पर कार्य रूप देती है व अपने पैरों के द्वारा ही कशीदाकारी सीख लेती है और उसमें निपुण व पारंगत हो जाती है।

प्रश्न — इस कहानी के बाद आपकी सोच में क्या बदलाव आया? अगर आप इला सचानी की जगह होते तब क्या करते?

इस प्रकार विद्यार्थियों से प्रश्न पूछकर उनके आलोचनात्मक चिंतन को बढ़ाया जा सकता है।

निष्कर्ष

समीक्षात्मक सोच रखना और उस सोच के साथ कार्य करना वर्तमान समय की माँग है। हमारी पाठ्यपुस्तकें, साहित्य, लोक कथाएँ, समाचार-पत्रों में दिए गए लेख एवं विश्लेषणात्मक टिप्पणियाँ, कहानियाँ (जैसे—मुंशी प्रेमचंद की कहानियाँ, चाणक्य नीति आदि) आदि आलोचनात्मक/समीक्षात्मक सोच को बढ़ाने का एक सशक्त माध्यम हैं। इनका प्रयोग कर शिक्षक, विद्यार्थियों में

समीक्षात्मक सोच विकसित करने का काम करते हैं, बल्कि समाज व राष्ट्र में भी समीक्षात्मक सोच व ज्ञान का प्रसार करने का काम करते हैं। इस प्रकार एक शिक्षक की सोच का प्रभाव, न केवल उसके विद्यार्थियों पर पड़ता है, अपितु अपनी सोच के द्वारा वह संपूर्ण समाज को प्रभावित करने की पूर्ण क्षमता रखता है। शिक्षक को यह बात कदापि नहीं भूलनी चाहिए कि वह अपनी समीक्षात्मक सोच के माध्यम से समाज में क्रांतिकारी परिवर्तन ला सकता है।

संदर्भ

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, 2009. रिमझिम, कक्षा 5. रा.शै.अ.प्र.प., नयी दिल्ली.

ज्योतिर्गमय फ़ाउंडेशन www.jyothirgamayaaindia.org

www.karanataka.com